'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ७८ | वाराणसी, गुरुवार, २ जुलाई, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

वेजलपुर (पंचमहाल) २४-१०-'५८

गांधी-विचार और सर्वोदय की कसौटी : शान्ति-सेना

अभी-अभी यहाँ उपस्थित सभी लोगों ने बहुत ही सुन्दर मौन रखा। सभीके चित्त की बड़ी ही सुन्दर एकाग्रता बन आयी। भगवान की प्रार्थना का यह सबसे अच्छा प्रकार है। इसमें सभी पंथों, सभी उपासनाओं का समावेश हो जाता है। याने जैसे समुद्र में सभी नदियाँ आ मिलती हैं, वैसे ही मौन में सभी उपासनाएँ, सभी पंथ समा जाते हैं।

मौन प्रार्थना का महत्त्व

भगवान विष्णु के सहस्र नाम हैं, फिर भी उन नामों के बीच बरबस ध्यान आकृष्ट करनेवाले दो ही हैं। एक है 'शब्दातिगः' याने शब्द से परे—उनका वर्णन शब्दों में करना संभव नहीं। दूसरा है, 'शब्दसहः' याने जो शब्द को सहन कर लेते हैं। हम सभी लोग भक्तिपूर्वक भगवान का कुछ वर्णन करते हैं, पर उससे उनका उत्तम वर्णन—समग्र वर्णन हो जाता है, ऐसी बात नहीं। फिर भी परमात्मा उन शब्दों को (वर्णन को) सह लेते हैं, जैसे कि नन्हें बच्चों के शब्दों को—तोतली बोली को पिता सह लेता है। जिस तरह वह बच्चों की अस्पष्ट, तोतली बोली को मीठा मान लेता है, उसी तरह जो शब्द भगवान के लिए बोले जाते हैं, उन्हें वह सह लेता है, यद्यपि उन शब्दों से उसका उत्तम और पूरा वर्णन नहीं हो पाता। इस तरह यह स्पष्ट है कि मौन प्रार्थना एक उत्तम प्रकार है। अगर हर घर के बच्चे और माता-पिता एक साथ बैठकर कोई भी भाषा न सूझे तो मौन से ही भगवान की प्रार्थना करने का रिवाज डालें तो वह अच्छी आदत कही जायगी। उससे समाज का गांभीर्य बढ़ेगा। मौन की यह आदत अहिंसा और शान्ति के लिए बड़े ही काम की है। बहुत बड़ा समाज जुटा हो और लोग शोरगुल कर रहे हों तो वहाँ एकदम घोषित कर दिया जाय कि 'मौनम्'। उससे सभी एक साथ शान्त हो जायँगे। अगर यह आदत पड़ जाय तो उससे शान्ति-स्थापना में काफी मदद मिलती है। इस तरह मौन से काफी लाभ उठाया जा सकता है। व्यक्ति के विचार के लिए तो यह उपयोगी है ही, साथ ही साथ समाज में व्यवस्था बनाये रखने के लिए भी उससे बड़ी मदद मिलती है।

गत तीन-साढ़े तीन सालों से मैंने सामुदायिक रूप में मौन का अभ्यास शुरू किया है। मैं चाहता हूँ कि हर घर में ऐसी ही प्रार्थना चले। हिन्दू, मुसलमान आदि सभीके एक ही प्रार्थना में इकट्ठा होने पर हमेशा सवाल खड़ा होता था। अन्य कामों में तो सभी एक-दूसरे के साथ भली-भाँति मिल सकते हैं, लेकिन प्रार्थना के समय झट अलगाव हो जाता है और किसी बात में अलगाव हो तो वह समझ में भी आ सकता है। लेकिन प्रार्थना में तो सभी को एक साथ ही रहना चाहिए। तभी हम भगवान के भक्त कहलाने योग्य माने जा सकते हैं, अन्यथा नहीं। मौन में यह बात आसानी से और भली-भाँति सध पाती है।

जमीन सबके लिए हो

आप सभी जानते हैं कि गत सात-साढ़े सात वर्षों से मेरी पदयात्रा क्यों चल रही है। आज यह समझना और भी आसान हो गया है। जहाँ दुखायल जी जैसे लोग पहुँचकर अपने भजनों से लोगों को जागृत करते हैं, वहाँ मेरा काम ९० प्रतिशत बन ही जाता है। अभी-अभी वे गा रहे थे : 'दे दो अब भूमि-अधिकार।' भूमि की सेवा करने का अधिकार भूमाता के हर पुत्र को है। यह अधिकार ही नहीं, उसका कर्तव्य भी है। वेद में लिखा है : 'माता भूमिः पुत्राऽहं पृथिव्याः।' भूमि हमारी माता है और हम सभी उसकी सन्तान हैं। हर पुत्र को उसकी सेवा का सौभाग्य प्राप्त होना ही चाहिए। अतएव किसीसे यह नहीं कहा जा सकता कि देश में जमीन कम है, इसलिए तुम्हें जमीन नहीं मिल सकती। जैसे हवा, पानी सभी के लिए है, वैसे ही जमीन भी सबके लिए होनी ही चाहिए।

ऐसी स्थिति में अगर कोई मुझसे यह कहे कि मुझे जमीन नहीं चाहिए। मैं दूसरा धंधा कर लूँगा तो मैं उसे मंजूर कर लूँगा। अगर आप दूसरे धंधे करते हों तो भले ही जमीन अधिक न लें। गाँव में अगर बढ़ई हो तो वह किसान के घर जाकर काम कर आये, पर इसके लिए उसे मजदूरी में पैसा नहीं मिलेगा। बल्कि गाँव में जो पैदावार होगी, उसका एक निश्चित हिस्सा दिया जायगा। फिर भी उसके साथ ही उसे अधिक नहीं तो आधा एकड़ जमीन तो देनी ही चाहिए। उसमें घर का मल-मूत्र विसर्जित

होगा, जो खाद का काम करेगा। इस आधा एकड़ जमीन में शाक-भाजी, खर, रूई आदि उठाया जा सकता है। अनाज के सिवाय परचून की चीजें उसमें पैदा की जा सकती हैं। पूरे समय एक ही काम करते रहना ठीक नहीं। मैंने आठ-आठ घंटे बुना, काता और खोदा है—चार घंटे सुबह और चार घंटे शाम को। किन्तु यह शरीर को श्रमशील बनाने के लिए और उन-उन कामों को प्रोत्साहन देने के लिए था। लेकिन कोई मुझसे कहे कि हमेशा के लिए आठ घंटे बुनाई का काम करो तो मैं साफ इनकार कर दूँगा। खानों में आठ-आठ घंटे काम करते रहना ठीक नहीं। कोई भी आदमी कभी भी दो घंटों से अधिक समय खान में न दे। शेष समय अच्छे खेत में दे। चार घंटे दूसरा ज्ञान प्राप्त करने, मानसिक उद्योग करने में बिताये। इसीसे उसका पूर्ण विकास हो सकता है।

भूमि-उपासना से ही सर्वांगीण विकास

आज तो एकांगी विकास होता है और उसीके कारण समाज आगे बढ़ नहीं पाता। वेद में ऋषि ने भगवान से शिकायत की है कि 'भगवन, मेरा चित्त बहुत ही दुःखी है। उस बढ़ई की पीठ दर्द कर रही है, उसी तरह मेरा हृदय भी पीड़ा पा रहा है। इसलिए प्रभो, मेरी बिनती सुनो।' वह आठ-आठ घंटे काम करता रहता है, इसलिए उसकी पीठ दर्द करती है, अतः थोड़ा काम खड़े होकर भी करना चाहिए। ऐसा काम खेत में हो सकता है। इस तरह स्पष्ट है कि दूसरे धंधे करनेवालों को अनाज पैदा करने के लिए खेत न दिया जाय तो भी शाक-भाजी बोने लायक जमीन तो हरएक को मिलनी ही चाहिए। अच्छी योजना के अनुसार प्रत्येक को भूमि पर काम करने का अधिकार ही नहीं, कर्तव्य भी है। इसलिए उसकी उपासना होनी ही चाहिए और उसके लिए हरएक को आधा एकड़ जमीन मिलनी ही चाहिए। बाकी गाँव में जो पैदावार हो, उस पर गाँव के सभी लोगों का अधिकार है। जमीन जोतनेवाले की ही है, दूसरे की नहीं, यह बात झूठी है। जो नहीं जोतता, उसकी भी जमीन हो सकती है। कितने ही लोग जमीन की सीधी सेवा करते हैं तो कितने जमीन की सेवा करनेवालों की सेवा करते हैं। इसीलिए सर्वोदय-योजना कहती है कि जब ऐसी योजना हो जायगी, तब 'दे दो भूमि-अधिकार' इस तरह अधिकार माँगना नहीं पड़ेगा।

भूमि-वितरण का आधार : सभीका समाधान

यह बात मैंने लगभग सारे हिन्दुस्तान में, हर प्रान्त में समझायी है। जहाँ जाता हूँ, वहाँ लोग इस बात को समझ जाते हैं। किन्तु जहाँ मोह रहता है, वहाँ समझने में थोड़ी देर लगती है। फिर भी लोग समझ गये हैं कि अब जमीन हमारे हाथ में नहीं रह सकती। अतः जब तक इसे पकड़ रखा जा सके, पकड़ रखा जाय। किन्तु यह गलत धारणा है। हम लोग लड़की को जल्दी से जल्दी ब्याहकर दूसरे के यहाँ पहुँचाना धर्म मानते हैं। इसीमें लड़की का कल्याण समझते हैं। घर की कन्या भी घर में अधिक रखने में भला नहीं मानते। इसी तरह सारी जमीन अपने पास रहना ठीक नहीं। जमीन की सेवा का अवसर सभी को मिलना चाहिए। एतदर्थ सारा गाँव मिलकर योजना करे। फिर अधिक जमीन हो तो १० वर्षों के लिए जमीन के मालिक को उसमें से कुछ अधिक भी दी जा सकती है, जैसा कि हम राजा-महाराजाओं को जन-साधारण से कुछ अधिक वार्षिक मदद देते हैं। किन्तु भूमिहीनों को तो वह मिलनी ही चाहिए। जमीन की मालकियत किसी व्यक्ति की न रहे। वह ग्रामसभा के नाम पर ही रहे। फिर दस वर्ष बाद जमीन का पुनः वितरण किया जाय। जिस तरह सभीका समाधान हो, उसी तरह उसका वितरण करें। वितरण में गाँव के सब लोगों का समाधान होना मुख्य है।

गाँव-गाँव ग्राम-स्वराज्य का नमूना हो

इसके साथ ही गाँव के उद्योग भी गाँव में ही चलने चाहिए। गाँव में उत्सव भी मनाये जायँ। वहाँ गाँव की स्वच्छता, सफाई, शिक्षण, पोषण और रक्षण की भी व्यवस्था होनी चाहिए। जितने विभाग दिल्ली के शासन में होते हैं, उतने ही विभाग ग्राम-स्वराज्य में भी होने चाहिए। साथ ही उन्हें ठीक से चलानेवाले होशियार लोग भी होने चाहिए। सभी प्रकार के विशेषज्ञ गाँव में होने चाहिए। गाँव की अपनी दूकान हो, उसीकी मार्फत आयात-निर्यात हो। सभी सब तरह के भेदभाव त्यागकर एक साथ रहें, एक साथ प्रार्थना करें। इस तरह यदि गाँव-गाँव में योजना हो तो इन गाँवों को देखने के लिए नन्दाजी, लालबहादुर शास्त्री आदि भी आने लगेंगे। वे देखेंगे कि इस गाँव में सिर्फ अनाज की फसल ही नहीं होती, अच्छा से अच्छा चिन्तन करनेवाले विशेषज्ञ भी गाँव में पैदा होते हैं। गाँव में ग्राम-स्वराज्य का नमूना होना चाहिए और उसे देखने के लिए देश-विदेश के लोग आयें। यह मैं सिर्फ स्वप्न की बातें नहीं कर रहा हूँ। इंग्लैण्ड, अमेरिका, फ्रांस, चीन, जापान, रूस सभी देशों के लोग हमारा ग्रामदान का यह काम देखने के लिए आ चुके हैं। वे मानते हैं कि ग्राम-स्वराज्य की योजना अहिंसा और शान्ति की योजना है। आज उसकी भूख सारी दुनिया को है। आज सारी दुनिया अशान्त है और शान्ति की खोज कर रही है। वह समझती है कि भारत में सर्वोदय का दर्शन हो सकता है। यह सारा काम ग्रामदान के आधार पर ही हो सकता है। यही सर्वोदय-विचार है।

सर्वोदय-विचार की प्रतिष्ठा अभी शेष है

जब हमें स्वराज्य मिला तो उसके बाद ही यह सर्वोदय का मन्त्र भी प्राप्त हो गया, यह देश का बहुत बड़ा सौभाग्य है। अगर वह न मिलता तो एक तपस्या के बाद जनता को दूसरी नयी तपस्या करने के लिए कभी उत्साह न मिल पाता। इस सर्वोदय-मन्त्र को सभी पसन्द करते हैं, बहुत अच्छा बताते हैं। लेकिन आरम्भ में लोगों का इस पर यह आक्षेप था कि अच्छा होने पर भी यह अव्यावहारिक कार्यक्रम है। किन्तु भूदान, ग्रामदान का काम शुरू हो जाने और उसमें इतनी बड़ी तादाद में सफलता मिलने पर अब लोगों को विश्वास हो चला है कि यह कार्यक्रम व्यावहारिक भी है। वे मानने लगे हैं कि यह विचार उत्तम है और परिपूर्ण भी है। कम्युनिस्टों की तरह यह 'कौन्सिल आफ परफेक्शन' जैसा नहीं है। इसे आज भी अमल में लाया जा सकता है। इस तरह आज सर्वोदय-विचार को मान्यता प्राप्त होने के बावजूद अभी सर्वोदय की प्रतिष्ठा नहीं हो पायी है। अभी उसकी कसौटी बाकी है और मैं समझ गया हूँ कि अब वह कसौटी होगी। सर्वोदय-विचार की कसौटी यही है कि आप कितने सेवकों की सेना खड़ी कर सकते हैं।

विचार को व्यावहारिक बनायें

आज सारे देश में भूदान, ग्रामदान के विचार का प्रचार करनेवाले ५ हजार से अधिक लोग नहीं हैं। ४० करोड़ की

जनसंख्या में ये पाँच हजार किस दरिया की खसखस हैं ? इसलिए अगर हम यह सिद्ध न कर दिखायें कि सर्वोदय-विचार लोक-सम्मति के आधार पर लोक-सेवकों की सेना खड़ी कर सकता है, वह सेना शान्ति-स्थापना में समर्थ हो सकती है, उसके करने से अशान्ति का मौका कम आता है और कदाचित् अशान्ति हो जाने पर बिना पुलिस को बुलाये वह शान्ति-सेना ही शान्ति-स्थापना कर सकती है, तो हमारा यह गांधी-विचार चाहे कितना ही ऊँचा क्यों न हो, अव्यवहार्य ही माना जायगा। उसमें व्यापक होने की शक्ति नहीं आ सकती। खादी, अस्पृश्यता-निवारण, स्त्री-शिक्षा, सेवा, ग्रामोद्योग आदि रचनात्मक कार्य आज थोड़ी बहुत मात्रा में भले ही चल रहे हों, पर राज्य तो दण्ड-शक्ति पर ही चल रहा है। आज अहिंसा का राज्य नहीं है, पर कल वह आना ही चाहिए। अगर हम शान्ति-सेना के माध्यम से आन्तरिक शान्ति-रक्षा की जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं उठा लेते तो सरकार की कितनी ही आलोचना करें—सेना पर बेशुमार खर्च करने को कोसें, उसका कुछ भी मूल्य नहीं हो सकता। सरकार यही कहेगी कि हम क्या करें, लाचारी है, दूसरा कोई व्यवहार्य उपाय नहीं है। इसके विपरीत यदि हम यह सिद्ध कर दिखायें कि देश की आन्तरिक शान्ति की जिम्मेदारी हम उठा सकते हैं तो निश्चय ही सर्वोदय-विचार व्यवहार्य माना जायगा। फिर उसका असर न केवल हमारी भारत सरकार पर, बल्कि सारी दुनिया पर पड़ेगा। दुनिया के लोग कहेंगे कि हिन्दुस्तान में आन्तरिक शान्ति के लिए लोगों की सेना ही काम करती है और उसके सैनिक प्रेम-पूर्वक अपनी जान भी खतरे में डालकर शान्ति-स्थापना करते हैं, मौके पर वे जान देने के लिए कमर कसे रहते हैं।

अहिंसा की शक्ति सिद्ध कर दिखायें

हम जमीन, फैक्टरी या संपत्ति के मालिकों से कहते हैं कि आप इनकी मालकियत छोड़ दें। इस पर वे हमें कह सकते हैं कि फिर आपमें और कम्युनिस्टों में अन्तर ही क्या रहा ? वे भी तो आपकी तरह ही मालकियत छोड़ने की बात कहते हैं। फिर जब वे हमें कम्युनिस्टों-सा ही समझने लगें तो स्वाभाविक ही है कि हमसे भी डरने लग जायँगे। इसलिए हमें यह सिद्ध कर दिखाना होगा कि मालकियत मिटाने की इच्छा रखते हुए भी जब तक वह नहीं मिटती, तब तक हम इन मालिकों को बचाने के लिए प्राणपन से तैयार हैं। उनका बाल भी बाँका न हो, इसके लिए हम अपनी जान भी जोखिम में डालने के लिए तैयार हैं। वे यह बात देख लेंगे तो उन्हें यह भली-भाँति ध्यान में आ जायगा कि सचमुच ये हमारा भला ही चाहनेवाले हैं। इससे उनका हृदय-परिवर्तन भी आसानी से हो सकता है। किन्तु इस प्रक्रिया में शान्ति-सेना की नितान्त आवश्यकता है। यही सर्वोदय की कसौटी है। अगर लोग यह कहें कि विनोबा और उसके साथियों ने काफी परिश्रम किया, पर शान्ति-सेना की स्थापना न कर पाये, अमुक हजार की तादाद में लोक-सम्मति के आधार पर सेवकों को खड़ा नहीं कर पाये—यह अगर इतिहास लिखे, तो मुझे यह सारा काम छोड़कर हिमालय में ही चले जाना चाहिए या खेती-बेती का कोई धंधा देखना चाहिए, सार्वजनिक काम करने का दावा छोड़ देना चाहिए। इसलिए यह हमारी कसौटी का समय है—मेरे लिए, आपके लिए और गांधी-विचार माननेवालों के लिए यह कसौटी का मौका है। आज जब अयूबखान के एक आर्डर पर कराची में दूध में पानी मिलाना बन्द हो जाता है, तो हिंसा ने नीतिरक्षा की अपनी शक्ति सिद्ध कर दी है। ऐसी स्थिति में अहिंसा भी अपनी शक्ति सिद्ध न कर दिखाये तो अहिंसा का राज्य कैसे बन सकेगा ?

वाणी का असर कब होगा ?

लोग कहते हैं कि 'अगर आपके हाथ में राज्य आ जाय तो दुर्जन खड़े हो जायँगे, बलवान बन जायँगे। इसलिए अच्छे लोग तो चुपचाप आश्रम, शालाएँ चलाते रहें। उनके लिए आवश्यक सुविधाएँ कर दी जा सकती हैं। आप सभी नमस्कार के पात्र हैं, लेकिन आपकी बात मानकर समाज में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इसलिए आप लोग मुँह बन्दकर चुपचाप रचनात्मक कार्य ही करते रहें।' किन्तु सोचने की बात है कि जब दूसरे लोग खुलकर बोलते रहें, चुनाव में खड़े हों, गालियाँ बकें तो वैसी स्थिति में हम मुँह बन्दकर काम कैसे कर सकते हैं ? क्या हमारा मुँह भी बन्द कर देना चाहते हैं, क्या वाणी का उपयोग उन्हीं को करने देना चाहते हैं, जिनके मुँह में गालियाँ भरी हैं ? तुलसीदास ने लिखा है कि बेचारी वाणी 'सिर धुनि-धुनि पछताई'। बेचारी सरस्वति सिर धुन-धुनकर पश्चात्ताप कर रही हैं। सच पूछिये तो वाणी का वास्तविक अधिकार तो हम जैसों को ही है। किन्तु वाणी का उपयोग करने पर उसका असर होना चाहिए। जब ऐसा होगा, तभी चार-पाँच वर्षों में लोक-सम्मति के आधार पर लोक-सेवकों की सेना खड़ी कर सकेंगे। तभी सर्वोदय-विचार व्यावहारिक विचार के तौर पर साबित होगा। नहीं तो वह अद्वैत विचार जैसा हो जायगा। हमें द्वैत तो तनिक भी पसन्द नहीं, भगवान और भक्त का, जड़-चेतन का अद्वैत चाहते हैं। लेकिन व्यवहार में सब तरह के भेद चालू हैं। फलतः वह अद्वैत विचार व्यावहारिक नहीं हो पाता। इसी तरह सर्वोदय-विचार भी व्यावहारिक न रह जायगा। इसलिए यह भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि सर्वोदय-विचार और गांधी-विचार की आज की कसौटी है—सरकार-निरपेक्ष होकर लोगों के आधार पर स्वतन्त्र सेना खड़ी करना, शान्ति-सेना खड़ी करना, जो देश की आन्तरिक रक्षा और शान्ति-स्थापना में पूरी मदद दे सके।

◇◇◇

भारत की भूमिका

मैं भारत और एशिया को एक गुट में शामिल नहीं करूँगा। भारत एक चीज है और एशिया दूसरी। भारत की भूमिका वही होगी, जो प्राचीन काल में थी, अर्थात् शान्ति फैलाना; सारे संसार का एक राष्ट्र-संघ स्थापित करना; एक-दूसरे के सुख-दुःख में हिस्सा बंटाना, हर व्यक्ति, हर समाज और हर राष्ट्र के लिए पूरी आजादी दिलाने की कोशिश करना। हमारा विश्वास है कि हितों में परस्पर संघर्ष नहीं। इस तरह के समाज की स्थापना करके भारत विश्व पर अपना प्रभाव डालेगा।

प्रार्थना-प्रवचन

जम्मू (कश्मीर) १४-६-'५९

पूरा गाँव शांति-सेना बने

हमने देखा कि जम्मू और कश्मीर का जो मसला है, उसका अंतर्राष्ट्रीय सवाल तो तब हल होगा, जब बैनुल अकवामी हालात बदलेंगे और हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, चीन, रूस, अफगानिस्तान आदि जिन-जिनका कश्मीर से सम्बन्ध आता है, उन सबके मन में मसला हल करने की बात आयगी। जब उन सबके मन में ऐसा खयाल आयेगा, तब सिर्फ कश्मीर का ही मसला नहीं, बल्कि दुनिया के सभी मसले हल होंगे। परन्तु जहाँ तक कश्मीर का सवाल है, वह तब हल होगा, जब यहाँ के लोग अंदरूनी ताकत महसूस करेंगे। होना तो यह चाहिए कि गाँव-गाँव के लोग अपनी जमात बनायें और एक-दूसरे के लिए मर मिटने के लिए तैयार हों।

गाँव एक-दूसरे के लिए मर मिटें

आज तक मैं इतना ही कहता था कि गाँव एक बनें। लेकिन अब कहना चाहता हूँ कि गाँववाले एक-दूसरे के लिए मर मिटने के लिए तैयार हों, जिससे कि गाँव एक मजबूत फौज बने। दुश्मन से लड़नेवाली फौज नहीं चाहिए, क्योंकि उसके सामने कोई दुश्मन ही नहीं है, उसके बजाय प्रेम करनेवाली फौज बने। जैसे फौजवाले discipline से, कानून से रहते हैं, वैसे ही गाँववाले अपना एक कानून बनायें और उसके मुताबिक चलें। राज्य का कानून अलग है, गाँव का कानून अलग होगा। गाँव के सब लोग मिलकर सोचेंगे कि गाँव की ताकत किस तरह बढ़ सकती है और गाँव के हर तबके के लिए क्या-क्या करना होगा। समाज में तबके होते हैं। हर तबके की जो सिफत होती है, उसे प्रकट करने का मौका मिलना चाहिए। हमारे गाँव का कोई मनुष्य दुःखी हो और वह अकेला ही रोता रहे, यह हम बर्दाश्त नहीं करेंगे। सारा गाँव उसके दुःख में शामिल होगा तो उसके दुःख का भार हलका होगा। इस तरह गाँववाले सुख-दुःख दोनों बाँट लेंगे।

कश्मीर-समस्या का हल

मेरे पास कोई चीज पड़ी है या मैंने अपने परिश्रम से कोई चीज पैदा की है तो वह चीज मेरी मानी जाती है। मैं उसका मालिक माना जाता हूँ। मेरा उस पर हक है, लेकिन सबको बाँटकर खाने का हक है। दूसरे को उस चीज से महरूम रखने का हक नहीं है। घर के मालिक या मालकिन, पिता-माता, घर के मुखिया हैं। इसका मतलब यह है कि वे सबको खिलाकर बाद में खाते हैं। अगर माँ कहे कि मैं मालकिन हूँ, इसलिए पहले मैं खाऊँगी तो वह मुखिया नहीं साबित होगी। इस तरह गाँव-गाँव के लोग खुश रहें, एक हों। मिल-जुलकर काम करें। जाति, धर्म का खयाल न करें और एक-दूसरे के लिए मर मिटने के लिए तैयार हों। यही कश्मीर का मसला हल करने का तरीका है। जातियाँ तो काम की दृष्टि से बनी हैं, उनमें ऊँच-नीच की बात नहीं है। धर्मों में भी कोई फर्क नहीं है। धर्म याने इबादत का तरीका। भगवान के गुण अनंत, लातादाद हैं। इबादत के तरीके भी कई होते हैं। जिसको जो गुण पसन्द हो, वह उसकी इबादत करता है।

रूहानियत का तरीका

गाँववालों को चाहिए कि जाति, धर्म, पक्ष आदि का खयाल छोड़कर ग्रामसमाज बनायें। इन दिनों जो पक्षभेद बने हैं, उनका कतई उपयोग नहीं है। राजनीतिक पक्ष तोड़नेवाले हैं, जोड़नेवाले नहीं। यह बात सारे हिन्दुस्तान को लागू होती है, लेकिन जम्मू-कश्मीर को ज्यादा लागू होती है। मुझे लगता है कि यहाँ (जम्मू-कश्मीर में) काम करना है तो जिनका सियासी चिंतन चलता है, वे कुछ भी नहीं कर सकते हैं। यहाँ काम करने का तरीका सियासी नहीं हो सकता है, रूहानी ही हो सकता है। सियासी तरीके से काम किया जाय तो गाँव के टुकड़े होंगे और फिर गाँव में सरकार का दखल होगा, जिससे गाँव की तरक्की नहीं होगी। गाँव के सब लोगों की तरक्की करनी है तो हमें रूहानी ढंग से ही पेश आना होगा। सियासी ढंग को छोड़ना होगा। छोटे अर्थ में हमें मजहबी ढंग को भी छोड़ना होगा और रूहानी ढंग ही अख्तियार करना होगा। याने सबकी रूह एक है, इसे समझना होगा। मजहब और सियासत को हम तोड़ सकते हैं। हम सब एक हैं, एक-दूसरे के लिए मर मिटने के लिए तैयार हैं। इस भावना से काम करना रूहानियत के ढंग से काम करना है।

पूरे गाँव की शांति-सेना

अभी तक मैं कहता था कि गाँव में काम करने के लिए शान्ति-सेना में नाम दीजिये। शान्ति-सैनिक मौके पर शान्ति के लिए मर मिटेंगे। लेकिन अब मैं दूसरी बात बोल रहा हूँ। वह यह कि कुल का कुल गाँव शान्ति-सेना बने। एक भी शख्स उसके बाहर न रहे। एक दिन में यह काम नहीं बनेगा, इसलिए आज मैं शान्ति-सेना में नाम तो ले रहा हूँ, परन्तु मैं यही कहूँगा कि ये शान्ति-सैनिक दही की तरह हैं और सारा गाँव दूध है। दही सारे दूध में अन्दर घुल-मिल जायगा तो सारे दूध का दही बन जायगा। वैसे ही ये शान्ति-सैनिक सारे समाज में घुल-मिलकर गाँव को ही शान्ति-सेना बनायेंगे। जब गाँव शान्ति-सेना बनेगा तो फिर गाँव की हिफाजत के लिए कुछ भी नहीं करना पड़ेगा। फिर गाँव पर कोई हमला नहीं करेगा। अगर बाहर के किसी देश ने हमला किया भी तो वह उस गाँव का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेगा। क्योंकि सारा गाँव एक बनेगा, गाँव का कोई भी मनुष्य दुश्मन का साथ नहीं देगा। इस तरह गाँव एक मजबूत किला बनेगा।

आज हमने आपसे दो बातें कहीं—१. पूरा का पूरा गाँव शान्ति-सेना बने। २. यहाँ पर सेवा करने का तरीका न सियासी होगा, न मजहबी होगा, बल्कि रूहानी होगा। ◆◆◆

अनुक्रम

१. गांधी-विचार और सर्वोदय की कसौटी:...
वेजलपुर २४ अक्टूबर '५८ पृष्ठ ५२९
२. पूरा गाँव शान्ति-सेना बने
जम्मू १४ जून '५९ " ५३२

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी